शिक्षा संवाद
2020, 7(1-2): 37-42
ISSN: 2348-5558
©2020, संपादक, शिक्षा संवाद, नई दिल्ली

आलेख

शिक्षा और संस्कृति

श्रुति टंडन
व्याख्याता,स्माजशास्त्र
राजकीय मीरा कन्या विद्यालय,
उदयपुर, राजस्थान

सार

शिक्षण एक सामाजिक प्रक्रिया है और शिक्षक इस प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण घटक है। अध्यापकों के युवा पीढ़ी को परमार्जित रूप से विकसित करने की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी निभानी होती है। उन्हें यह एक तरफ परम्परागत संस्कृति को सम्भालने तथा दूसरी ओर वैज्ञानिक तालमेल से युक्त विकसित समाज में जीने का सबक सीखाना होता है। इसीलिए अध्यापकों को अपने समाज की समस्याओं और केन्द्रीय मुद्दों को समझने की आवश्यकता।

शिक्षा एक व्यापक एवं गतिशील सामाजिक प्रक्रिया है। शिक्षा द्वारा ही आज हम मंगल ग्रह तक पहुँचने में सफल हुए हैं। यदि हम मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखें तो शिक्षा मनुष्य की जन्म जात शक्तियों का विकास तथा उदातीकरण करती है। सामाजिक दृष्टि से वह उसका सामाजिकरण करती है अर्थात् उसमें सामाजिक गुणों का विकास करती है। राजनीतिक दृष्टि से वह उसे राष्ट्र का सुयोग्य नागरिक बनाती है और धार्मिक दृष्टि से वह उसे पशु से देवता की ओर ले जाती है। इस प्रकार शिक्षा मानव जीवन के समस्त पक्षों के विकास में सहयोगपूर्ण कार्य करती है। विकासात्मक कार्यों के अन्तर्गत मनुष्य की प्राकृतिक रूचियों के विकास और शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक, नैतिक, सामाजिक, भावात्मक तथा आध्यात्मिक विकास को रखा जा सकता है। सामाजिक कार्यों के अन्तर्गत सामाजिक भावना की जागृति, सामाजिक चेतना और परिवर्तन, सामाजिकरण, भावनात्मक एकता के विकास आदि कार्यों को रखा जा सकता है। सांस्कृतिक कार्यों में संस्कृति की सुरक्षा और हस्तान्तरण को रखा जा सकता है। रचनात्मक कार्यों में जीविकोपार्जन सम्बन्धी हस्तकौशल, उत्पादन कार्य और उद्योगों को चलाने

सम्बन्धी कार्यों को रखा जा सकता है। इस प्रकार शिक्षा से व्यक्ति जीवन के प्रति उचित दृष्टिकोण बनाता है। इस दृष्टिकोण के विकास में संस्कृति एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।शिक्षा के क्षेत्र में संस्कृति एक अत्यन्त धारणा है। जब हम शिक्षा के सन्दर्भ में बात करते हैं तब हम उस शिक्षा की बात करते हैं जो कि सांस्कृतिक वातावरण में पाई जाती है। संस्कृति न केवल शिक्षा के लिए रूपरेखा प्रदान करती है, अपितु यह शिक्षा को निर्देश भी देती है।

शिक्षा सांस्कृतिक विचारधारा का ही एक भाग है। इसका स्वरूप उसी संस्कृति से आंका जाता है, जिसमें कि यह संगठित होती है या फिर यह भी कहा जा सकता है कि इसके अस्तित्व का भी लोगों की संस्कृति से ही अनुमान लगाया जाता है। शिक्षा केवल संस्कृति के स्थानान्तरण से ही सम्बन्धित नहीं है अपितु यह नई सांस्कृतिक विचारधाराओं का भी निर्माण करती है। यह वर्तमान संस्कृति में समय एवं परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन लाती है। व्यक्ति को सांस्कृतिक परिवर्तन लाने योग्य बनाया जाता है ताकि वह परिवर्तनशील वातावरण में अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।

इसके साथ-साथ उसे जीवन में परिस्थिति के अनुकूल व्यवहार करने योग्य भी बनाया जाता है ताकि वह परिवर्तित सामाजिक जीवन को स कर सकें, जिसमें उसने जन्म लिया है। अतः यह सर्वविदित हैः-शिक्षा संस्कृति का उत्पाद हैतथा शिक्षा नई पीढ़ियों के प्रति संस्कृति के विकास का कार्य करती है।इतना ही नहीं शिक्षा ही सांस्कृतिक परिवर्तन में सहायक होती है और शिक्षा व्यक्ति को परिवर्तित सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य के अनुरूप व्यवहार करने योग्य बनाती है।

संस्कृति एक श्रेष्ठतम धरोहर

संस्कृति ही मानव की श्रेष्ठतम धरोहर है, जिसकी सहायता से मानव पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ता जा रहा है। मानव और पशु में मुख्य अन्तर संस्कृति का ही है। संस्कृति के अभाव में मनुष्य को पशु से श्रेष्ठ नहीं माना जा सकता। मानव में ही वह अद्भुत शक्ति एवं क्षमता मौजूद है कि वह संस्कृति का निर्माता कहलाने का अधिकारी है। प्रमुख मानवशास्त्री लेस्ली हाइट के अनुसार सीधे खड़े हो सकने की क्षमता, स्वतंत्रतापूर्वक घुमाये जा सकने वाले हाथ, तीक्ष्ण एवं केन्द्रित की जा सकने वाली दृष्टि, मेधावी मस्तिष्क, प्रतीकों के निर्माण की क्षमता के विशेषताएँ हैं, जिनके कारण मानव संस्कृति का निर्माण का पाया है।

संस्कृति का धनी होने के कारण ही मनुष्य अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ है और वह अति-प्राणी कहलाने का अधिकारी है। संस्कृति किसी व्यक्ति विशेष की देन नहीं होती वरन् सम्पूर्ण समाज की देन है। इसी कारण संस्कृति में सामाजिक गुण निहित होता है। संस्कृति मानव आवश्यकताओं की पूर्ति

करती है। इसमें समय, स्थान, समाज एवं परिस्थितियों के अनुरूप अपने आपको ढ़ालने की क्षमता होती है।

संस्कृति शब्द संस्कृत भाषा से लिया गया है। संस्कृत और संस्कृति दोनों ही शब्द 'संस्कार' से बने हैं। संस्कार का अर्थ है कुछ कृत्यों की पूर्ति करना। संस्कृति का अर्थ होता है विभिन्न संस्कारों के द्वारा सामूहिक जीवन के उद्देश्यों की प्राप्ति करना। यह परिमार्जन की प्रक्रिया है।संस्कृति एक व्यापक प्रक्रिया है, जिसकी व्याख्या विभिन्न अर्थों से की गई है। इतिहासकार संस्कृति शब्द का प्रयोग मानव समाज एवं समूह की उन्नत अवस्था के लिए करते हैं। धर्म, ज्ञान, विज्ञान, कला, संगीत, दर्शन एवं साहित्य के क्षेत्र में मानव ने प्राचीन काल से वर्तमान तक जितनी उपलब्धियाँ प्राप्त की है, इतिहासकार उन्हें संस्कृति की श्रेणी में रखते हैं। संस्कृति के नीतिशास्त्रीय अर्थ का सम्बन्ध उन वस्तुओं से है जो मानव जीवन को आनन्द प्रदान करती है। नैतिक दृष्टि से संस्कृति का सम्बन्ध नैतिकता, सच्चाई, ईमानदारी, आदर्श नियमों एवं सद्गुणों से है।

नीतिशास्त्र में संस्कृति शब्द का प्रयोग धार्मिक एवं नैतिक गुणों से युक्त आचरण के लिए किया जाता है।मानव शास्त्र में संस्कृति शब्द का प्रयोग भिन्न अर्थों में हुआ है, जिसमें संस्कृति को जीवन की सम्पूर्ण विधि के रूप में स्वीकारा गया है। टायलर के अनुसार 'संस्कृति वह समग्र जटिलता है जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, आचार, कानून तथा और ऐसी ही अन्य क्षमताओं एवं आदतों का समावेश है जो मनुष्य समाज का एक सदस्य होने के नाते प्राप्त करता है।' लिंटन संस्कृति को परिभाषित करते हुए कहते है कि 'संस्कृति ज्ञान, धारणाएँ एवं प्राकृतिक व्यवहार के प्रतिमानों का कुल योग है जिसके सभी भागीदार होते हैं तथा जो हस्तान्तरित की जाती है।' समाजशास्त्रीय अर्थ में संस्कृति को समाज की धरोहर या विरासत के रूप में परिभाषित किया गया है।

बीयस्टीड के अनुसार संस्कृति के अन्तर्गत हम जीवन जीने, कार्य करने एवं विचार करने के उन सभी तरीकों को सम्मिलित करते हैं, जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते हैं और समाज के स्वीकृत अंग बन चुके हैं। अतः यह सर्वविदित है कि हमारी संस्कृति हमारे ऊपर एक अकाट्य प्रभाव डालती है। हमारी जीवन पद्धति काफी हद तक इसी से प्रभावित होती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि हर व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अपने निजी तरीकों एवं साधनों का प्रयोग करता है।

परन्तु इसके साथ-साथ वह हर समय संस्कृति के द्वारा निर्देशित किया जाता है जो समय-समय पर उसे शिक्षित करती है। शिक्षा का कार्य व्यक्ति को अपने जीवन के लिए तैयार करना है। शिक्षा का यह कार्य तब तक समाप्त ही नहीं हो सकता जब तक कि लोगों को संस्कृति से न जोड़ा जाए।

संस्कृति और शिक्षा

शिक्षा की औपचारिक संस्थाओं की स्थापना सोच-समझकर समाज और राज्य करते है, जैसे - सरकार में शिक्षा विभाग और शिक्षा की संस्थाएँ, जैसे - विद्यालय, महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय। इन संस्थाओं द्वारा जिस प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था की जाती है उसके उद्देश्य, पाठ्यक्रम और शिक्षण-विधियाँ पहले से ही निश्चित होते है।

इन संस्थाओं में शिक्षा शिक्षकों द्वारा उनकी देखरेख में एक निश्चित प्रक्रिया के द्वारा दी जाती है। समाज अथवा राज्य के उद्देश्यों की प्राप्ति इन संस्थाओं के द्वारा सम्भव हो सकती है। पर सबसे महत्वपूर्ण देन इन औपचारिक संस्थाओं की यह है कि ये संस्थाएँ विज्ञान और तकनीकी शिक्षा के संग हमें हमारी संस्कृति की शिक्षा देती हैं। इन संस्थाओं के अभाव में हम अपनी संस्कृति समाज द्वारा अर्जित गुण और समाज की उपलब्धियों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तान्तरित नहीं कर सकते। हालांकि इस प्रकार की शिक्षा की अपनी सीमाएँ हैं, पर साथ ही इस सत्य को नकारा नहीं जा सकता कि यदि इन संस्थाओं के वातावरण को संस्कृति से जोड़ा जाए तो यह ना सिर्फ व्यक्तित्व विकास में और राष्ट्र निर्माण व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संस्कृति का परचम फहराने में सहयोग कर सकती हैं।

संस्कृति शिक्षा के सभी पक्षों को प्रभावित करती है। शिक्षा के अर्थ और लक्ष्य सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, सांस्कृतिक विचारों, मूल्यों तथा समाज की रूपरेखा पर निर्भर करते हैं। इसी तरह समाज का शैक्षणिक पाठ्यक्रम उसकी संस्कृति पर निर्भर करता है ताकि पाठ्यक्रम के माध्यम से शिक्षा के लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सके। क्योंकि शिक्षा के लक्ष्य उस समाज विशेष की संस्कृति से प्रभावित होते हैं और उसी के द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। इसीलिए पाठ्यक्रम समाज की संस्कृति के अनुरूप ही तैयार किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि किसी समाज का शैक्षणिक पाठ्यक्रम उन्हीं विचारों एवं आवश्यकताओं पर आधारित होना चाहिए जो कि समाज में सांस्कृतिक मूल्यों द्वारा अनुभव की जाती है।

शिक्षा प्रणाली पाठ्यक्रम के माध्यम से समाज की सांस्कृतिक आवश्यकताओं को अनुभव करती है जिसके परिणामस्वरूप समस्त शैक्षणिक क्रियाएँ एवं कार्यक्रम किए जाते हैं। शिक्षण विधियों पर भी संस्कृति का गहन प्रभाव है। पुराने समय में शिक्षा अध्यापक पर केन्द्रित होती थी तथा बच्चों की रूचि एवं आवश्यकताओं को जाने बिना उन्हें पढ़ाने पर जोर दिया जाता था। याद करने अथवा कण्ठस्थ करने पर ही बल दिया जाता था। परन्तु वर्तमान समय में, शिक्षा छात्र केन्द्रित हो गई हैं जिसके परिणामस्वरूप छात्र की रूचि, आवश्यकता, दृष्टिकोण, योग्यता आदि को ध्यान में रखकर ही शैक्षणिक क्रियाओं, कार्यक्रमों तथा अनुभवों अथवा अभ्यासों का निर्माण किया जाता है। इस प्रकारशिक्षण की

विधियों एवं तकनीकों को सांस्कृतिक एवं सामाजिक आवश्यकताएँ प्रभावपूर्ण बनाती हैं।अनुशासन भी सांस्कृतिक मूल्यों से प्रभावित होता है। वर्तमान में बाल-केन्द्रित शिक्षा ने लोकतांत्रिक मूल्यों को स्वीकारा है। इसलिए अनुशासन की धारणा भी एक साधन बन चुकी है। आत्म-अनुशासन भी एक मुख्य विचारधारा है। चूंकि पाठ्यक्रम का नियोजन सांस्कृतिक मूल्यों के प्रकाश में ही किया जाता है। इसलिए पाठ्य-पुस्तकें लिखते समय पाठ्यक्रम द्वारा निर्धारित इन सांस्कृतिक मूल्यों को ध्यान में रखा जाता है। केवल वही पुस्तकें मान्य मानी जाती है जो सांस्कृतिक मूल्यों, विचारों और नैतिकता के अनुकूल होती है।

अतः यह स्पष्ट है कि विद्यालय वास्तव में समाज का ही एक प्रारूप है। विद्यालय की समस्त क्रियाएँ एवं कार्यक्रम समाज के सांस्कृतिक विचारों एवं मूल्यों के अनुसार ही निर्धाथ्रत की जाती है जो कि विद्यालय की स्थापना और संगठन करती है। इसलिए विद्यालय समाज के सांस्कृतिक रूप से उत्साहन, प्रोत्साहन, परिवर्तन, सुधार एवं विकार प्रदान करने का केन्द्र है जो अपने भले एवं कल्याण के लिए ही विद्यालय की स्थापना करता है।अतः यह स्पष्ट है कि संस्कृतिक और शिक्षा में बहुत निकट सम्बन्ध है इसलिए अध्यापकों के लिए सांस्कृतिक समझ की बहुत आवश्यकताओं को भी स्वीकार करना चाहिए। शिक्षण समाज का एकमात्र ऐसा व्यक्तित्व होता है जो बालक को नागरिकता की शिक्षा सच्चे अर्थों में देता है। बालक जो कि अपने अन्दर पाश्विक प्रवृत्ति लिए होता है उसे शिक्षक ही मानव बनाने का दायित्व रखता है। विद्यालयों में शिक्षक, शिक्षण के माध्यम से ही छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन कर उसे समाजोपयोगी बनाता है।

निःसंदेह किसी भी राष्ट्र के निर्माण में शिक्षण की केन्द्रीय भूमिका होती है। कोठारी कमीशन (1964) के अनुसार "भारत में भाग्य का निर्माण विद्यालयों की कक्षाओं में हो रहा है।" शिक्षण एक सामाजिक प्रक्रिया है और शिक्षक इस प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण घटक है।अध्यापकों के युवा पीढ़ी को परमार्जित रूप से विकसित करने की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी निभानी होती है। उन्हें यह एक तरफ परम्परागत संस्कृति को सम्भालने तथा दूसरी ओर वैज्ञानिक तालमेल से युक्त विकसित समाज में जीने का सबक सीखाना होता है। इसीलिए अध्यापकों को अपने समाज की समस्याओं और केन्द्रीय मुद्दों को समझने की आवश्यकता है। अध्यापकों को संरक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह भी करना होता हैं। इसके द्वारा संस्कृति की एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी की तरफ निरन्तरता प्रदान की जा सकती है। संरक्षक के साथ-साथ प्रगतिशील भूमिका के लिए अध्यापक को अपनी संस्कृति की पूर्ण सूझ होनी अति आवश्यक है।इसके अतिरिक्त एक अध्यापक को शिक्षा के लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए विस्तृत एवं विशाल सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पक्षों का भी बोध होना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं कि उन्हें विषय के सम्बन्ध में और लक्ष्यों के बारे में जागरूक होना चाहिए, परन्तु यह जागरूकता तक निरर्थक है जब वे शिक्षा के विशाल लक्ष्यों को उद्घाटित नहीं करता। इसलिए उन्हें विशिष्ट दार्शनिक बनने की आवश्यकता है। इसके परिणामस्वरूप वह शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों को हल

करने योग्य बनेगा जो कि किसी विषय के संकुचित उद्देश्यों से कई अधिक महत्वपूर्ण है। अतः शिक्षक को आज के आधुनिकीकरण के युग में बहुत सचेत और जागरूक होना चाहिए। उनका विषय के प्रति व संस्कृति का ज्ञान बहुत विस्तृत होना चाहिए। वह अध्ययनशील तथा कर्तव्यों के प्रति समर्पित हो, यह आवश्यक है। उसका आधुनिकता में विश्वास हो और विभिन्न संस्कृतियों के आदान-प्रदान में सहयोग देने वाला हो। शिक्षक सिर्फ विषय विशेष को पढ़ाने के लिए केवल सिद्धान्तों तक सीमित न रहकर प्रयोगात्मक, अवलोकन और निरीक्षण के नए तरीकों को शिक्षण हेतु अपनाने में पूरी तरह से अभ्यस्त हो ताकि सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति सम्मान के संग वह विद्यार्थियों में विश्व नागरिकता की भावना का विकास कर सकें।

अतः यह कहना गलत नहीं होगा कि संस्कृति व्यक्ति के व्यक्तित्व शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक एवं कलात्मक पक्षों से संवारने में सहायता करती है, जिसका माध्यम बनती है शिक्षा। संस्कृति के लिए शिक्षा के द्वारा ऐसे ज्ञान का विस्तार किया जाना चाहिए, जिसके द्वारा मनुष्य के व्यक्तित्व को संवारने और मानवीय जीवन को उज्ज्वल बनाने सरीखे महत्वपूर्ण कार्य सिद्ध किए जा सकें। शिक्षा के उद्देश्य के रूप में संस्कृति मनुष्य की कलात्मक बौद्धिकता को विकसित करेगी। यह उसे मानवीय विचारों के विभिन्न पक्षों अथवा रूपों को समझने योग्य बनाएगी। यह उसकी दृष्टि अथवा सोच को विकास प्रदान करेगी, उसकी रूचि का पोषण करेगी, उसे सामाजिक परिप्रेक्ष्य में स्वीकृत व्यवहार करने योग्य बनाएगी। संस्कृति हमारी व्यवहारी में रहती है और इसी से परिलक्षित होती है। संस्कृति मानव जीवन को समृद्ध करती है तथा मनुष्य की शक्तियों को प्रशिक्षण देकर उन्हें आगे बढ़ाती है यानि शिक्षा के द्वारा संस्कृति का संवर्द्धन दिया जाता है। इसीलिए संस्कृति के विस्तार में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

*****

संदर्भ

- कोठारी कमीशन. (1964). *कोठारी कमीशन रिपोर्ट.* भारत सरकार।
- कुलश्रेष्ठ, & हीरानन्दानी. (2006). "एजूकेशनल एप्टिट्यूड आफ पर्सपेक्टिव टीचर्स". *एडू ट्रैक, 5*(7).
- आहूजा, राम, & आहूजा, मुकेश. (2008). *समाजशास्त्र - विवेचना एवं परिप्रेक्ष्य.* रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
- शर्मा, जी.एल. (2005). *सामाजिक मुद्दे.* रावत पब्लिकेशन, जयपुर।